NJESR/March 2022/Volume-4/Issue-3 E-ISSN-2582-5836
DOI-10.53571/NJESR.2022.4.3. 64-68

दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध

डॉ0 मौ0 इमरान खान
अध्यक्ष – हिन्दी विभाग
एम0जी0एम0 (पी0जी0) कालेज, सम्भल
mohdimranmgm@gmail.com

Received : 20 February 2022/ Revised :05 March 2022/Accepted :15 March 2022/Published :29 March 2022

दलित साहित्य में सौन्दर्य बोध को समझने से पूर्व हमें दलित साहित्य की अवधारणा, उसकी प्रासंगिकता तथा दलित शब्द का अर्थ व चेतना को समझना होगा, जो सवाल दलित गैर दलित रचनाकारों, आलोचकों, विद्वानों के बीच उठते रहते हैं। दलित शब्द जातिसूचक समुदाय सूचक अथवा वर्ग सूचक नहीं है। इस शब्द का शब्दिक अर्थ दलन और दमन से है अर्थात वह मनुष्य, जाति वर्ग या समुदाय सदियों से समाज की मुख्य धारा से उपेक्षित रहा हो, जो अधिकारों से वंचित हो, जिस पर समाज ने अत्याचार व उत्पीड़न किया हो, तथा जो जन्म से अछूत हो। वही दलित की श्रेणी में आता है। ''वास्तव में दलित वही व्यक्ति हो सकता है, जो सामाजिक तथा आर्थिक दोनों दृष्टि से दीन–हीन हो इससे भिन्न अर्थों में दलित शब्द को लेना 'दलित' शब्द का ही विकृतिकरण करना है। जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया, जिसे कठोर और गन्दे कर्म करने के लिए वाध्य किया गया, जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतन्त्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की । वही और सिर्फ वही दलित है।''[1] उक्त दलित शब्द कीं अवधारणा के लिए हमें भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था को भी देखना होगा। भारतीय वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत चार वर्ण थे– बाह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र। चूँकि इस वर्ण व्यवस्था में शुद्र सबसे निम्न था और उन्हीं पर समाज में सबसे अधिक शोषण व अत्याचार हुए, वहीं समाज की मुख्यधार व अधिकारों से वंचित था। इसलिए यह दलित शब्द एक जाति वर्ग तथा समुदाय का पर्याय बन गया। यह एक ऐसी व्यवस्था थी, जिसमें मनुष्य अपने कर्म से नहीं, बल्कि अपने जन्म से अहूत था । उसके विपरीत एक ब्राह्मण का बच्चा जन्म से ही श्रेष्ठ होता है। कर्म या आर्थिक परिस्थितियाँ उसके लिए आवश्यक नहीं है।

दलित इस व्यवस्था का विरोध भी नहीं कर सकता था, क्योंकि इसके लिए हमारी राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ जिम्मेदारी थी। दलित साहित्य की विकास यात्रा पर नजर डाले तो भारतीय वर्ण व्यवस्था में इन्हें शुद्व कहा गया। गाँधीवदी युग में 'हरिजन' और अब उसे दलित कहा जा रहा है। ''दलित साहित्य की संस्कृति को एक वाक्य में कहना हो तो, वह वर्ण व्यवस्था मुक्त जीवन पद्धति और लोकतांत्रिक सत्ता का नाम है।''[2] डॉ0 गोवर्धन बंजारा का मानना है कि ''दलित साहित्य की दृष्टि से अतीत एक स्याह पृष्ठ है।'' जहां उसकी अपनी दुनिया रही है। उसका खान–पान, रीति–रिवाज़, रहन–सहन, जीवन–शैली, सौन्दर्य की अवधारणा सभी कुछ उच्च वर्ग से भिन्न थे। दलित साहित्यकारो के लिए दलित साहित्य महज एक साहित्यिक आन्दोलन मात्र नहीं है किन्तु अपनी अस्मिता एवं मुक्ति संघर्ष का साहित्य है। इसलिए साहित्य निर्मित एवं मूल्यांकन की प्रकिया में वह सामाजिक बोध और प्रतिबद्धता को महत्व देता है। अब उसे दया, करूणा सहानुभूति नही, अपना अधिकार चाहिए। वह अब अपनी लड़ाई खुद लडना चाहता है। पुरानी रूढ़, बर्बर मान्यताओं अथवा परम्पराओं के सारे गढ़, मठ एवं तिलिस्म को तोड़ना चाहता है जो रूढ़ मान्यताएँ एवं परम्पराएँ सदा सवर्ण में श्रेष्ठ एवं पूज्यनीय रही हैं। जो लोग दलित साहित्य को केवल जातिवादी बताकर उससे किनारा करना चाहते हैं

उन्हे दलित साहित्य के गहनतापूर्ण अध्ययन की आवश्यकता है। क्योंकि सदियों से समाज में दलितो व शोषितों का नंगां व कुरूप चित्र समाज के सामने था। दलितवादी साहित्य उसी का आईना है, जो समाज को घृणित मानसिकता से निकालकर उसे स्व नैंतिकता एवं बन्धुत्व की ओर ले जाना चाहता है। यही दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध है।''दलित साहित्य मानववादी साहित्य है जो लोग उसे मानववादी न मानकर समाज को विभाजित करने वाला जातिवादी साहित्य अपनी हठधर्मिता का परिचय दे रहे हैं।''[3]

दलित साहित्यकारों में दुःखदर्द एवं उसके द्वारा भोगे गये जीवन्त अनुभवों को दलित साहित्यकारों ने परिवर्तन कामी चेतना के साथ अभिव्यक्त किया है। प्राचीन साहित्य परम्परा पर प्रहार करते हुए श्री पुरूषोततम सत्यप्रेमी कहते है–''वर्ण व्यवस्था के अमानवीय बन्धनों ने शताब्दियों से दलितों के भीतर हीनता के भाव को पुख्ता किया है। धर्म और संस्कृति की आड़ में साहित्य ने भी इस भावना की नींव सुदृढ़ की है, जो समाज के अनिवार्य और अंत सम्बन्धों को खंडित करने में सहायक रहा है।'' अब दलित साहित्य–कहानी उपन्यास, कविता तथा नारी लेखन हो, अब वह भावात्मक व शिल्प की दृष्टि कमजोर नही है। दलित साहित्यकारों के पास विस्तृत दृष्टि है। अपने विकास की लम्बी यात्रा तय कर चुका है। अब यह अपने उच्चतम शिखर पर पुहंच चुका है। ''अब हिन्दी साहित्य की आलोचना जहाँ गाँधीवादी सिद्धान्तों पर होगी, जहाँ मार्क्सवादी सिद्धान्तों पर होगी, वहीं उसकी आलोचना अब अम्बेडकरवादी सिद्धान्तों से होगी। दर्शन की दृष्टि से यह दलित साहित्य की बड़ी उपलब्धियाँ हैं''[4]

मैंने दलित साहित्य को सौन्दर्य बोध की दृष्टि से देखने का प्रयत्न किया है। मैं उसके सौन्दर्य शास्त्रीय अध्ययन में न जाकर भाषा बिम्ब, मिथक एवं प्रतीक में फंसना नही चाहता। दलित साहित्य के अस्वादन के लिए अलग सौन्दर्य शास्त्र की मांग होती रही है। इन दलित साहित्यकारों का अपना मानना है कि परम्परावादी सौन्दर्य शास्त्रीय मानदण्डों, प्रतिमानों के आधार पर दलित साहित्य को नहीं देखा व परखा जा सकता है। सांस्कृतिक विभिन्नताओं के रहते हुए मूल्यांकन के एक समान प्रतिमान हो नहीं सकते। दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध काल्पनिक, रोमांटिक नही है; बल्कि उसमें जीवन के बहुआयामी सच को दर्शाया गया है। उसमें निहित निषेध और विद्रोह के माध्यम से समानता स्वतन्त्रता और बन्धुत्व का विकास ही उसके सौन्दर्य का मानदण्ड है। राजेन्द्र यादव का मानना है–''जो नया सौन्दर्यशास्त्र बनेगा, वह संघर्ष से शुरू होगा, उस यातना से शुरू होगा, चाहे वह उसका रिआलाइज करने अथवा उस यातना को, उसकी तकलीफ को, उसके भेदक रूप को समझने के रूप में हो, उसके बाद बदलने की मानसिकता के रूप में हो, जिसे हम संघर्ष कह सकते हैं। तीसरा एक स्वप्न के रूप में होगा, हमें करना क्या है? हमें समान्तर सौन्दर्यशास्त्र देना है। वैकल्पिक समाज बनाना है, यह सारा सघर्ष साहित्य में भी है और समाज में भी।''[5]

जब दलित व उपेक्षित वर्ग ने शिक्षा पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इससे सामाजिक परिवर्तन और न्याय की अवधारणा को बल मिला और उनकी सांस्कृतिक चेतना विकसित होने लगी। आज का दलित साहित्य पिछली एक सदी के सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलन का परिणाम है। आज का दलित साहित्य अपनी ऐतिहासिक सांस्कृतिक परम्पराओं से दलित समाज को परिचित करा रहा है। समाज में दलित चेतना का विकास करके ही अपनी अस्मिता की सही पहचान करायी जा सकती है। आजादी के पश्चात् संवैधानिक अधिकारों ने दलित मुक्ति के नवीन द्वार खोले। ''मानसिक गुलामी से मुक्ति का सबसे बड़ा साधन शिक्षा है। जो सभी तरह की गुलामी से मुक्ति की राह दिखाता है।''[6] दलित साहित्य की अन्तर्चेतना में वेंदना मूलक संघर्ष भाव की प्रधानता है जो यातना से उपजी है। राजेन्द्र यादव कहते हैं– ''साहित्य जिन तत्वों से अमर स्थायी या सार्वभौमिक होता है, उनमें तीन मुझे सबसे प्रमुख लगते हैं– संघर्ष, यातना और विजन.....।''[7]

दलित साहित्य में यदि हमें सौन्दर्य बोध को देखना है तो हमें आदिकाल से लेकर अब तक के दलित साहित्य पर विचार करना होगा। कबीर रैदास, तुलसीदास, प्रेमचन्द्र तथा निराला के साहित्य में दलितों के अत्याचारों के उत्पीड़न अधिकार हीन तथा उपेक्षित दशा पर पर्याप्त चर्चा हुई। तथा उसके प्रति सहानूभूति भी प्रकट की है। तत्कालीन समय में दलित अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों को बदलने सक्षम नहीं था। अतः उसने स्वयं को उन परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लिया था। निराला ने चतुरी चमार नामक उपन्यास लिखा साथ ही अन्य रचनाकारों ने भी दलित सहित्य पर लिखा। जैसे नागार्जुन

का बलचनमा एक महत्वपूर्ण प्रगतिवादी साहित्य में उनकी दशा और दिशा दोनों बदली। अपनी शिक्षा अधिकारों के प्रति सचेत हुआ तथा समाज की मुख्य धारा से जुड़ा। इस कार्य में डॉ0 अम्बेडकर तथा अम्बेडकरवादी विचारकों का विशेष योगदान रहा। सौन्दर्य के लिए सामाजिक यथार्थ एक विशिष्ट घटक है। कल्पना और आदर्श की नींव पर खड़ा साहित्य किसी भी समाज के लिए प्रांसगिक नही हो सकता है। ''दलित साहित्य की भाषा, प्रतीक, बिम्ब, भावबोध परम्परावादी साहित्य से भिन्न है; उसके संस्कार भिन्न हैं''[8] डॉ0 एन0सिंह की धरणा है कि दलित साहित्य का सौन्दर्य प्रहार में है , सम्मोहन में नही। वह समाज और साहित्य के शताब्दियों से चली आ रही ,सड़ी ,गली, परम्पराओं, पर बेदर्दी से चोट करता है। वह शोषण और अत्याचार के बीच हताश जीवन जीने वाले दलित को लड़ना सिखाता है। वह सिर पर पत्थर रखने वाली मजदूर महिला को उसके अधिकारों के विषय में बताता है। उसे धर्म की भूलभूलैया से निकालकर शोषण से मुक्ति का मार्ग दिखाता है, उसके लिए शब्द प्रहार क्षमता आवश्यक है। वह उसमें है और यह दलित साहित्य का शिल्प सौन्दर्य है।''[9]

सौन्दर्य बोध चाहे साहित्यिक हो या वस्तु का वह मनुष्य को सुख व आन्तरिक अनुभूति प्रदान करता है। दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध निम्न तत्वों में निहीत है–''समता, स्वतन्त्रता और बन्धुत्व इन तीनों जीवन मूल्यों को दलित साहित्य के सौन्दर्य तत्व मान सकते हैं। दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र (1) कलाकारों की सामाजिक प्रतिबन्धता (2) कलाकृति में जीवन मूल्य (3) पाठकों में जागृत होने वाली समता स्वतन्त्रता, न्याय ओर भ्रातृभाव की चेतना जैसे मूलतत्वों पर टिका रहने वाला है।''[10] जब हम कहते हैं कि प्रेमचन्द का मूल्यांकन करते समय समकालीन दलित साहित्य या दलित विमर्श के साथ उसका घालमेल न करें, तो हमे उसको अलग करने वाले बिन्दुओं पर चर्चा करने की आवश्यकता है। प्रेमचंद को दलित साहित्य के मसीहा के रूप में साबित करने की कोशिश नहीं करनी चाहिये क्योंकि उन्होंने जो समकालीन समाज में जो देखा वही अपने साहित्य के रूप में प्रस्तुत किया इसलिए उन्हें आदर्शवादी एंव यथार्थवादी साहित्यकार कहा जाता है। इस दष्टि से प्रेमचन्द की कहानियाँ–ठाकुर का कुआँ, दूध का दाम, सद्गति आदि प्रमुख हैं। सद्गति का नामक दलित है। वह अपने सांसारिक सुख एवं आन्तरिक दुख के लिए पण्डित घासीराम से सत्यनारायण की कथा कराना चाहता है। पंण्डित गृह से निकले तो देखा दुखी चमार घास का एक गटठर लिए बैठा है दुखी उन्हे देखते ही उठ खड़ा हुआ और उन्हें साष्टांग दंडवत प्रणाम करके हाथ बाँधकर खड़ा हो जाता है। ..... दुखी को देखकर श्रीमुख से बोले आज कैसे चला रे दुखिया ? दुखी ने सिर झुकाकर कहा –''बिटिया की सगाई कर रहा हूँ। महाराज! कुछ साइत–सगुन विचारना है। कब मर्जी होगी?'' घासी ''आज मुझे छुटटी नही है। हाँ साँझ तक आ जाऊंगा।'' दुखी ''नही 'महाराज' जल्दी मर्जी हो जाए । सब समान ठीक कर आया हूँ। यह घास कहाँ रख दूँ।'' घासी ''इस गाय के सामने डाल दे और जरा झाडू लेकर द्वारा तो साफ कर दे। यह बैठक भी कई दिन से नहीं लीपि है। उसे भी गोवर से लीप दे। ..... यह लकड़ी भी चीर देना। खलियान में चार खाँची भूसा पडा है। उसे भी उठा लाना और भुसौल में रख देना।'' वह बूड़े से लकड़ी के गट्ठे पर प्रहार करते–करते अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेता है। यह तो है प्रेमचन्द्र युग में दलितों की दशा जिसका वह प्रतिकर नही कर सकता। किन्तु उसके प्रति सहानुभूति है। वही दूसरी ओर प्रगतिवादी युग में दशा के साथ दिशा भी बदली। दलित समाज में शिक्षा के प्रति रूझाान की बढ़ा। दलित वर्ग में शिक्षा के साथ आत्मबल एवं रूढ़ परम्पराओं व मान्यताओं के प्रति प्रतिकार भी उसमें दिखाई देने लगा। ''सामाजिक आन्दोलन का सांस्कृतिक क्रान्ति के साथ जुड़कर विस्तृत आकार ग्रहण करता जा रहा है। इसलिए सांस्कृति क्रांति के सन्दर्भ में दलित साहित्य की प्रांसगिकता अपने लक्ष्य में अंतर्निहित है क्योंकि शिक्षा के आभाव में ही दलित समाज अपनी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में असफल रहा है। सांस्कृतिक चेतना के बिना साहित्यिक अभिव्यक्ति असम्भव है।''[12] समकालीन सन्दर्भ में दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध देखने के लिए हमें समाकालीन दलित साहित्यकार व उनकी कृतियाँ–कौशल्यावैसंती–दोहरा अभिशाप (आत्मकथा) तुलसीराम–मुर्दहिया(आत्मकथा) सुशीलाटाक भौर–शिकंजे का दर्द (आत्मकथा) मलखान सिंह – सुनों ब्राह्मण (कविता) आसंग घोस–मैं दूँगा माकूल जबाब (कविता) जितेन्द्र वर्मा इज्जत (कहानी) अजय यतीश–भूत(कहानी) मोहनदास नैमिशराय अपना गांव, आज बाज़ार बन्द है' आवाजें (कहानियाँ) अपने–अपने पिंजरें (उपन्यास) ओमप्रकाश वाल्मीकि सलाम (कहानी संग्रह) इसमें कुल 14 कहानियाँ हैं–सलाम, विरम की बहू, पच्चीस चौका डेढ सौ, गोहत्या, जूठन आदि दलित साहित्य की मशहूर कृतियाँ हैं। 'परिवर्तन की बात' सूरपाल चौान की अत्यन्त सशक्त कहानी है। दलितों की गुलामी से मुक्ति का दंश भी झेलना पड़ता है। ठाकुर साहब की

गाय मर जाती है तो वह किसना चमार के यहाँ पहुंचते हैं उसे उठाकर फेंकने के लिए किसना कहता है, ''मैने मरे जानवर उठाना बन्द कर दिया है।''यह सारी विरादरी का सामुहिक फैसला है इस पर ठाकुर गुस्से में आ जाते हैं। ठाकुर उनकी वस्ती के चारों ओर कांटेदार तारों की बाड़ खींच देते हैं। चमारों का आने–जाने का रास्ता ठाकुरों की जमीनों से होकर गुजरता था। रघु ठाकुर हाथ में लटठ् लिये दूर खड़ा कह रहा था–''सालों समय परिवर्तन की बात कहते हो। हम देखते हैं, तुम्हारा समय कैसे बदलता है। अब घरों में ही हगो और मूतों।'' उक्त कहानी के कथ्य को देखकर हम कह सकते हैं कि दलित होना अभिशाप है। डॉ0 शरणकुमार लिवांले का मत है–''एक अनाम बालक पूछता है, मैं कौन हूँ? मेरा दोष क्या है? वही दलित चेतना में उसके सौन्दर्य शास्त्र पर विवेचना करते हुए। सत्य, शिव, सुन्दरम् की नई परिभाषा करता है क्योंकि उसने उसे अपनी दृष्टि से देखा और यह भी उसे संवर्णों के सत्य शिवम, सुन्दर से बिल्कुल भिन्न और विपरीत पाया है।''[13] जितेन्द्र वर्मा की कहानी ''इज्जत' समाज में जातिवाद प्रथा को वेपर्दा करती है इस कहानी में बाबू साहब दलितों की शिक्षा और तरक्की के खिलाफ हैं। मंगरू गांव छोडकर भाग जाता है। वह पढ़–लिखकर शहर के एक कॉलिज में प्रोफेसर हो गया। यह जानकर बाबू साहब के चेहरे का रंग बदल जाता है। वह कहता है कि सरकार बेकार में हरिजनों को सिर पर चढ़ाये जा रही है।'' अजय यतीश की कहानी 'भूत' में धर्म के नाम पर अधर्म किये जा रहे शोषण का बहुत ही संवेदनशील चित्र खीचती है। ..... मुर्गे की बलि के मांस के साथ शराब चढ़ती है। कलपू की जवान बीबी को शराब पिलायी जाती है और औझा व दलाल उसके साथ सम्भोग कर चला जाता है।''

ओमप्रकाश बाल्मीकि की 'सलाम' कहानी को देख सकते हैं। इसका नायक पढ़ा लिखा बी0ए0 पास है। यह सामंती सोच और व्यवस्था के खिलाफ है जो बरसों से चली आ रही है। इस कहानी का पात्र हरीश जो पढ़ा–लिखा युवक है तथा शहर से गाँव व्याह के लिए आया है। वह गाँव में घूम–घूमकर बड़े लोगों के दरवाजे पर जाकर सलाम करने के खिलाफ है। वह थोड़े से कपड़े, बर्तन और नेग के लिए अपने स्वाभिमान को गिरवी नही रखना चाहता इस कहानी का सौन्दर्य बोध है कि शहर और गाँव के जीवन का फर्क शहर के लोग शिक्षित होने के साथ–साथ अपने अधिकारों के प्रति सचेत भी होते हैं। शहर से हरीश का दोस्त कमल भी उसके साथ आया है। गाँव आकर वह यह देखता एवं महसूस भी करता है कि अखवारों में छपी दलित शोषण की जिन घटनाओं पर उसे कभी विश्वास नहीं होता था, वे सच में घटित होती है। ऐसी अनेक घटनाऐं अक्सर उसकी निगाहों से गुजरी है। ऐसी ही एक घटना से वह खुद रूबरू हुआ। जब एक सुबह एक चाय की दुकान पर अपमानित किया जाता है जाति विशेष के सम्बोधन से उसे गालियाँ दी गयीं, ''कमल को लगा जैसे अपमान का घना वियावान जंगल उग आया है उसका रोम–रोम कांपने लगा। उसने आस–पास खड़े लोगों पर निगाह डाली। हिंसक शिकारी तेज नाखून से उस पर हमला करने की तैयारी कर रहे थे।'' कमल की गलती महज इतनी थी कि वह हरीश का दोस्त था। ब्राह्मण होने के बाबजूद वह कैसे एक दलित के घर रूक सकता है।

हरीश के भीतर आक्रोश है वह कहता है कि ''आप चाहे जो समझे ..... मैं इस रिवाज को आत्मविश्वास तोड़ने की साजिश मानता हूँ। यह सलाम की रस्म बन्द होनी चाहिए।'' यह कहानी अपनी अस्मिता व अधिकारों के प्रति सचेत करने वाली है तथा रूढ़िवादी विचार धारा के सारे बन्धनों को तोड़ती है। यही दलित साहित्य का सौन्दर्य वोध है।

अतः मैं डॉ0 शरण कुमार लिंवाले की अपनी आत्मकथा 'अक्करमाशी' के माध्यम से अपनी बात को पूर्ण करना चाहता हूँ। अक्करमाशी के रूप में अछूत रूप में दरिद्र के रूप में जो जीवन जीता रहा उसी को मैनें शब्द दिये हैं। लेखक खुद एक दलित माँ एवं सवर्ण पिता से जन्मी संतान है, जिसकी वजह से उसे अक्सर अपमानित होना पड़ता है। जैसा कि लेखक ने भूमिका में कहा है, 'जिन यादों को कहने की इच्छा हुई, जो यादें अधिक हरी हो जाती थी, उन्हें ही मैंने कहा है। लिंवाले अपनी आत्मक्था में जिस यथार्थ बोध व समाजिक बोध की बात करते हैं। उसे देखकर ऐसा लगता है कि उन्होंने सदियों से किसी तहखाने में बन्द दलितों व सर्वहारा वर्ग को नवीन चेतना प्रदान की। हम यूँ भी कह सकते हैं कि मृतप्राय शरीरों में प्राण फूंक दिये हों। '' सत्य कहने का जोखिम विरले ही उठा पाते हैं, और अपना सत्य कहने का जोखिम तो बहुत ही दुष्कर कार्य है, कठिन है पर डॉ0 लिंवाले ने यह किया। इसलिए अक्करमाशी अपने सत्य के साथ पूरे समाज के सत्य का दस्तावेज बन सामने आई, जो उन्हें जरूर शर्मिन्दा कर गई जो मनुष्य हैं।''[14] लेखक ने निजी जीवन के सच के बहाने उस समाज के

सच को बयां किया है, जो सदियों शोषण अपमान और पीड़ा की बुनियाद पर खड़ा है। शक्ति सम्पन्न समाज द्वारा उसके ऊपर ढाय हर जुल्मोंसितम को सहते हुए समाज की तकलीफ को इनके बीच का ही कोई मनुष्य प्रमाणिकता से लिख सकता है। अक्करमाशी समाज के पीडित वर्ग की यातना को जिस तरह से सामने लाती है, उससे पढ़ने वाले के मन की तमाम पूर्व मान्यतायें ध्वस्त हो जाती हैं। इसे पढ़ने के बाद कोई भी संवेदनशील पाठक इस वर्ग में रह रहे लोगों की तकलीफ के सामने खुद को खड़ा पाता है। सामाजिक विषमता के प्रति मन दुख और अक्रोश से भर जाता है। यह दलित साहित्य का सौन्दर्य बोध है जो उत्कृष्ट समाज एवं सुन्दर भविष्य की सच्ची तस्वीर सामने रखता है।

सन्दर्भ सूची

01. कंवल भारती दलित साहित्य की अवधारणा प्र0 संस्करण 2006 पृ0 15
02. वही पृ0 126
03. डॉ0 तेज सिंह, आज का दलित साहित्य, संस्करण 2000 पृ0 8–9
04. कवंल भारती, दलित साहित्य की अवधाराणा, प्र0 संस्करण 2006 पृ0 108
05. राजेन्द्र यादव–युद्धरत आम आदमी (सम्पा0 रमणिका गुप्ता) अंक 41 वर्ष 1998 पृ0 126
06. डॉ0 तेज सिंह, आज का दलित साहित्य संस्करण 2000 अपनी बात (भूमिका से)
07. राजेन्द्र यादव, काली सुर्खियाँ (सम्पादित कहानी संग्रह) संस्करण 1994 पृ0 12
08. ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र प्र0 संस्करण 2001 भूमिका सें
09. डॉ0 एन0सिंह, दलित प्रवाह और साहित्य तटबन्ध–शिखर की ओर (सम्पादित) 1997प्र0 353
10. डॉ0 शरण कुमार लिंवाले, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र (अनुवाद–रमणिका गुप्ता) प्र0 संस्करण 2000 पृ0 116
11. प्रेमचन्द –सद्गति (प्रेमचनद की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ) पृ0 318
12. डॉ0 तेज सिंह आज का दलित साहित्य, संस्करण 2000, अपनी बात (भूमिका से)
13. डॉ0 शरण कुमार लिंवाले दलित साहित्य सौन्दर्यशास्त्र (अनुवाद–रमणिका गुप्ता) प्र0 संस्करण 2000 पृ0 9
14. वही पृ0 9